भाग २ अध्याय १२

श्रमनीति

बोनस, भविष्य निधि अदायगी

प्रकाशक :–
भारतीय मजदूर संघ
२ नवीन मार्केट
कानपुर

मूल्य : तीस पैसे

प्रस्तावना

राष्ट्रीय श्रम आयोग को भारतीय मजदूर संघ द्वारा प्रस्तुत किये गये "Labour Policy" नाम अंग्रेजी पुस्तक का यह हिन्दी अनुवाद है। हिन्दी में इस पुस्तक के सभी २० अध्याय अलग-अलग पुस्तिका के रूप में प्रकाशित किये गये हैं।

आपातकाली स्थिति के अन्तर्गत कारावास की अवधि में इस अध्याय का अनुवाद आई० आई० टी० कानपुर के प्राध्यापक डा० भूषण लाल घूपड़ के सहयोग से किया गया है।

हम उनके प्रति अपना आभार प्रकट करते हैं।

—रामनरेश सिंह

* बोनस अदायगी का कानून *

बिना किसी दुराग्रह के हमारी पूर्व में कही गयी संस्तुति को जिसके अन्तर्गत बोनस को 'देरी से दिया गया वेतन' के रूप में उस अवधि तक माने जाने चाहिए जब तक असली वेतन और जीवन वेतन के बीच का अन्तर समाप्त नहीं हो जाता, उस अनुसार बोनस कानून में पूर्ण रूपेण संशोधन होना चाहिये। इस संदर्भ में कानून में निम्नलिखित परिवर्तन के लिये हम उल्लेख कर रहे हैं।

(१) कानून की धारा ३२ को अधिनियम से निकाल देना चाहिये, इस कानून के अन्तर्गत कर्मचारियों के कुछ वर्गों का उल्लेख है, जिन पर यह कानून नहीं लागू होता। बोनस पारतोषिक नहीं है, वरन् श्रमिकों का कानूनी हक है और बोनस पाने के हक को सभी श्रमिकों के लिए लागू होना चाहिए, बिना नियोजक की किसी प्रकार की बिशेषता के परन्तु प्रमुख रूप से प्रशासकीय तन्त्र के अन्तर्गत सरकारी नौकरों को छोड़कर।

(२) सामुहिक लाभ में से विकास की छूट अथवा विकास के लिये धनराशि की कटौती के लिये किन्चित भी अनुमति नहीं देनी चाहिए और इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु धारा ६ सी उपधारा बी को हटा देनी चाहिए। यहाँ यह स्मरण रहे कि बोनस आयोग ने यह सिफारिश की है कि विकास हेतु छूटको पूर्व निर्धारित खर्चे के रूप में अनुमति नहीं देनी चाहिए। विकास की छूट के बारे में आयोग ने यह कहा है "अब हम विकास की छूट और विकास की छूट के कारण हुये बचत कर के प्रश्न पर आते हैं.....यह विशेष छूट कम्पनियों को नई मशीनरी लगाने के लिए प्रोत्साहन के रूप में होती है।

किसी एक वर्ष में जबकि बहुत सी मशीनें लगायी जाय, पूरे विकास की छूट के साथ साथ 'कानूनी मूल के साथ छूट' सहित पूर्व खर्चे के रूप में सम्मिलित करने से उपलब्ध फालतू धनराशि पूर्णरूपेण समाप्त हो जाय अथवा पर्याप्त मात्रा में कम हो जाय, जबकि वस्तुतः कारखाने के कार्यकलापों से काफी बड़ी मात्रा में लाभ हुआ हो, हमको ऐसा अनुभव होता है कि यदि विकास की छूट को पूर्व खर्चे के रूप में अनुमति नहीं दी जाती है तो यह ठीक होगा कि विकास की छूट के परिणाम स्वरूप कर में जो छूट होती है, बोनस फार्मूले के अन्तर्गत उसको अर्थात् आयकर और सुपर टैक्स को काट लेने के विचार को ध्यान में नहीं रखना चाहिए। इसका अथ है यह कि परिणाम स्वरूप विकास की छूट के एक भाग को पूर्व खर्चे के रूप में करने की अनुमति दी जा रही है, क्योंकि लाभ के एक भाग, जिस पर वस्तुतः कर नहीं दिया जाना चाहिये, पर कर काटा जा रहा है। कम्पनियों पर लागू आय कर और सुपर टैक्स की वर्तमान दरों के अन्तर्गत, जो कि ५० प्रतिशत है, विकास की छूट पर कर दी उचत उस धन राशि की ५० प्रतिशत होगी, इसलिए इसका प्रभाव यह पड़ेगा कि कम्पनी, टैक्स के लिये अतिरिक्त कटौती के द्वारा विकास की छूट पर ५० प्रतिशत के बराबर लाभ प्राप्त करेगी, जो (अर्थात् विकास कर) कि बोनस फार्मूलों की उद्देश्य पूर्ति के लिये पूर्व खर्चे के रूप में है।"

(३) बोनस आयोग की सिफारिशों के अनुसार केवल आय कर और सुपर टैक्स को पूर्व खर्चे के रूप में मानने की अनुमति देनी चाहिए और उसे ही सम्पूर्ण लाभ में से काटने की अनुमति देनी चाहिये। और इस उद्देश्य पूर्ति हेतु धारा ६ (स) में उचित संशोधन करना चाहिये और धारा २ (१२) को हटा देना चाहिए। सर टैक्स और अतिरिक्त लाभ कर और कोई भी दूसरे सीधे लगाये जाने वाले करों को पूर्व खर्चे के रूप में अनुमति नहीं देनी चाहिए। सुपर प्राफिट कर के प्रश्न पर विस्तृत चर्चा की गई है परन्तु अन्ततोगत्वा बोनस आयोग ने इसे अमान्य कर दिया है।

जहाँ तक सुपर प्राफिट टैक्स का प्रश्न है आयोग ने कहा है, "हम इस

विचार के हैं कि बोनस फार्मूले की उद्देश्य पूर्ति के लिये आंकड़ें निकालते समय सुपर प्राफिट टैक्स के कारण कोई भी कटौती नहीं करनी चाहिए। हमारे कारण निम्नलिखित हैं—

(१) सर्व प्रथम इसे मस्तिष्क में लाना होगा कि आयकर कानून के अन्तर्गत बोनस के रूप में दी जाने वाली तर्क संगत धनराशि को खर्चे के रूप में माना जाता है। (२) बोनस फार्मूले के अन्तर्गत आयकार और सुपर टैक्स को इसलिए काटा जाता है ताकि इन करों के धनराशि का हिसाब करने के पश्चत् पूजा और सुरक्षित कोष पर न्यूनतम रिटर्न निश्चित किया जा सके। (३) कम्पनीज एक्ट की धारा ३४६ (४) (डी) के अन्तर्गत सुपर प्राफिट टैक्स को अधिक अथवा असाधारण लाभ पर कर माना है, जैसा कि सरकार ने घोषणा की है। (४) यदि सुपर प्राफिट टैक्स को पूर्व खर्चे के रूप में माना जाय, क्योंकि बोनस रूप में दी गयी धनराशि पर सुपर प्राफिट टैक्स नहीं लग सकता और सुपर प्राफिट टैक्स अधिक लाभ पर कर के रूप में है, यह आवश्यक होगा कि बोनस के लिये निर्धारित धनराशि पर बोनस के कारण सुपर टैक्स की बचत को जोड़ें, परन्तु इसकी जोडना जरा कठिन होगा, क्योंकि सुपर प्राफिट टैक्स के आंकड़े निकालना अपने में ही पर्याप्त जटिल है। अतएव यह अच्छा होगा कि बोनस फार्मूले को अनवश्यक रूप से पेचीदा न बनाया जाय (५) सुपर प्राफिट टैक्स का पूर्व खर्चे के रूप में न काटने का एक और भी कारण है कि वह यह कर की अदायगी तभी होगी, जब शेष लाभ पर्याप्त मात्रा में हो, क्योंकि आय का वह भाग जो स्थायी कटौती के अतिरिक्त हैं, पर ही कर लगाया जा सकता है।"

(३) जैसा कि बोनस आयोग ने सिफारिश की है, पूँजी पर ७ प्रतिशत की दर से रिटर्न की अनुमति दी जाय और सुरक्षित कोष पर केवल ४ प्रतिशत की दर के रिटर्न की अनुमति दी जाय, इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु कानून की सूची क्रमांक क्रमाक ३ में समुचित संशोधन किया जानाचाहिए।

जहां तक पूंजी और सुरक्षित धनराशि पर रिटर्न का प्रश्न है, आयोग ने कहा है "बोनस के लिये उचित फार्मूले पर विचार करते समय यह ध्यान रखना चाहिए और इस तथ्य पर आग्रह करना चाहिए कि उद्योग के साथ साथ श्रमिकों को भी यह लाभप्रद है कि पूँजी लगाने के लिए लोग होने चाहिये और उन्हें उद्योग में पूजी लगाने के लिये उचित लाभ की आशा होनी चाहिये परन्तु बोनस फार्मूले से यह अपेक्षा नहीं की जाती कि वह करों की बढ़ोत्तरी के विरोध में पूँजी लगाने वालों को सुरक्षा प्रदान करेगा। विगत अनेक वर्षों की स्थितियों में जबकि योजनाओं के खर्चे को ध्यान में रखकर और इससे भी अधिक आपात्कालीन करके दरों में बहुत उढ़ोत्तरी हुयी है, जिसके परिणाम स्वरूप सभी प्रकार के जन समुदाय पर प्रभाव पड़ा है.....। हमारे सामने प्रस्तुत की गई याचिकाओं को ध्यानपूर्वक विचार करने के पश्चात् हम इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि अदा की गयी पूजी पर रिटर्न का ७ प्रतिशत बोनस फार्मूले में पूर्व खर्चे के रूप में अनुमति दी जानी चाहिए। परिस्थितियों में पर्याप्त परिवर्तन हो गया है, जब फार्मूले को पूरे बेन्च ने बताया था। अदा की गयी पूजी पर रिटर्न की दरों में कुछ बढ़ोत्तरी के लिए अब समय आ गया है। हम यह विचार नही करते कि पूर्व खर्चे के लिए ७ प्रतिशत से अधिक रिटर्न की अनुमति दी जानी चाहिए। जो रिटर्न हम सुरक्षित कोष के ऊपर प्रस्तुत कर रहे हैं, अंशधारियों (शेयर होल्डर्स) को अतिरिक्त लाभांश (Dividents) पहुँचायेगा। उपलब्ध अतिरिक्त धन का अनुपात, जिसके बारे में हम सुझाव दे रहे हैं, बोनस उदायगी के पश्चात् कम्पनी के पास इस मात्रा में उपलब्ध होगा, जिसके अन्तर्गत अन्य वस्तुओं के साथ-साथ शेयर होल्डर्स को अधिक लाभ (Dividents) देने की सम्भावना होगी। ऊपर लिखे विषयों को ध्यान में रखकर फिर भी यह कहा जा सकता है कि वर्तमान श्रमिक वर्ग में प्रमुखतया करखाने में लाभ पैदा करने के लिये योगदान दिया है, जिसमें से सुरक्षित कोष को बनाया गया है और जिसमें कारखाने के लाभ पैदा करने की क्षमता को बढ़ाया है और इसे भिन्न भिन्न पक्षों में से एक पक्ष माना जाना चाहिये। यद्यपि यह निर्णायक पक्ष नहीं है, जिसके अन्तर्गत अदा की गयी पूँजी

के मुकाबले में सुरक्षित कोष पर कम रिटर्न देना है। इस विषय पर ध्यान पूर्वक सोचने के पश्चात हम इस विचार के हैं कि बोनस फार्मूले में अदा की गयी पूंजी के मुकाबले में सुरक्षित कोष पर रिटर्न के पूर्व खर्चे का दर कम होना चाहिये और इसे उस दर पर चालू रखना चाहिए, जिसके अनुसार सुरक्षित कोष पर रिटर्न आम तौर से दिया जाता है, जो वर्तमान फार्मूले के अन्तर्गत कार्यरत पूंजी के रूप में प्रयोग होता है और इसकी दर ४ प्रतिशत है।"

(५) यदि निर्यात से कमाई गयी आय पर छूट सीधे कर के सम्बन्ध में दी जाती है, तो इस प्रकार की छूट की धनराशि को समूचे लाभ में जोड़ देना चाहिए। इसी प्रकार किसी भी उद्योग से विकास के लिये कोई भी छूट अथवा सुविधा जब दी जाती है तो इसे भी समूचे लाभ में सम्मिलित कर देना चाहिये। इस योग का सीधा कारण यह हैं कि कोई भी लाभ जो नियोजक द्वारा प्रदान नहीं किया जाता उसको श्रमिकों में बाँटा जाना चाहिए, क्योंकि श्रमिकों के सहयोग और योगदान से ही नियोजक अपने व्यापार अथवा उद्योग का विकास करता है तथा इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु धारा ७ (बी) और ७ (सी) को हटा देना चाहिये।

(६) किसी भी प्रकार के संदेह को दूर करने के लिए और श्रमिकों के लाभ पर बोनस के अधिकार का समर्थन करने के लिए कानून में श्रम एपलेट फार्मूले के अनुसार बोनस भुगतान हेतु स्पष्ट रूप से प्राविधान होना चाहिए। ध्यान रहे कि यह उन श्रमिकों के लिये है, जो किसी संस्थान में २० की संख्या से कम हैं। यहाँ यह स्मरण रखना चाहिए कि मद्रास उच्च न्यायालय ने विभिन्न चीली और किराना मर्चेन्ट के मामलों में ऊपर के विचार को मान्यता दी है। विवाद का निर्णय लेबरला जर्नल जून १९६७ में प्रकाशित हुआ है।

७. कानून की धारा १७ (ए)के अनुसार पूजा अथवा त्यौहार व परम्परागत दिए जाने वाले बोनस की किसी भी धनराशि को कानून के अन्तर्गत अदा किये जाने वाले बोनस के रूप में समायोजित होना चाहिए।

कानून के अन्तर्गत बोनस का अर्थ केवल मात यह है जो लाभ पर बोनस के नाम से जाना जाता है। प्रोत्साहन बोनस व उत्पादन बोनस आदि की अदायगी कानून के अन्तर्गत नहीं आता, क्योंकि यह लाभ पर बोनस में समायोजित अथवा सम्मिलित नहीं है। इसी प्रकार कुछ मौकों पर दिये जाने वाले बोनस, पूजा बोनस तथा त्यौहार बोनस को भी त्यौहार के अन्तर्गत सम्मिलित नहीं करना चाहिए। दूसरे शब्दों में कानून के अन्तर्गत बोनस को पूजा अथवा त्यौहार बोनस के अतिरिक्त अदा करना चाहिए। इस उद्देश्य पूर्ति हेतु धारा १७ (ए) में उचित रूप से संशोधन करना चाहिए।

८. धारा १९ बोनस की अदायगी के लिये समय सीमा निर्धारित करती है, परन्तु यह समय सीमा बोनस के बारे में तथा उसका विस्तृत रूप से गणना करने के लिए निर्धारित नहीं है। इसलिए बहुत से नियोजक, जिनका कोई ईमान व धर्म नहीं होता, केवल चार प्रतिशत बोनस देते हैं और जब श्रमिक विवाद खड़ा करते हैं उस समय भी नियोजक अतिरिक्त बोनस की अदायगी को उस तिथि से लेकर माप के अन्त तक नहीं करते, जिस तिथि पर एवार्ड के अनुसार लागू होनी चाहिए थी, अथवा समझौता कार्यान्वित होनी चाहिये थी, जैसा कि कानून की धारा १९ (ए) के अन्तर्गत कही गयी है। इसलिये धारा १९ में संशोधन करना चाहिये, ताकि बोनस के बारे में समय सीमा अनिवार्य रूप से निर्धारित हो सके। इस प्रकार के संशोधन महाराष्ट्र सरकार ने करने की कोशिश भी की है।

९. धारा १४ (बी) में यह प्राविधान है कि बोनस के आंकड़े निकालने के लिए कार्य दिवस की संख्या निकालनी पड़ती है। इस हेतु एक श्रमिक के वे दिन, जिन दिनों में वह वेतन अथवा आय सहित छुट्टी पर था, कार्य दिवस में सम्मिलित किया जाना चाहिये।

यह समझना भी कठिन है कि आय सहित छुट्टी को क्यों सम्मिलित किया गया है और आय रहित छुट्टी को इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु क्यों नहीं सम्मिलित करना चाहिए। अधिकृत और अनधिकृत अनुपस्थिति का तर्क सङ्गत आधार पर भेद किया जा सकता है, परन्तु जहाँ तक बोनस कानून का सम्बन्ध

है, वेतन सहित वेतन रहित छुट्टी को एक ही आधार पर लेना चाहिये, नहीं तो वे विशेषकर वे अभागे कर्मचारियों, जो लम्बे काल तक अस्वस्थ रहते हैं और बिना वेतन के उन्हें छुट्टी पर रहना पड़ता है, कहे गये प्राविधान के अन्तर्गत वे बड़ी भारी हानि उठाने को बाध्य होंगे। इसलिए कही गयी धारा १४ (बी) में उचित संशोधन करना चाहिये।

१०. धारा २३ में यह प्राविधान है कि कम्पनी की बैलेन्स सीट और लाभ हानि के लिखे जोखे, जो कि योग्य अंकेक्षक (आडीटर) द्वारा ठीक प्रकार से जांची गई हो, को ठीक माना जाना चाहिये। और आवश्यक नहीं है कि नियोजक इन विवरणों को और उनमें लिखी विस्तृत जानकारी की प्रमाणिकता को सिद्ध करे, यदि उसने इस हेतु इसके साथ एक हलफनामा अथवा किसी और पद्धति द्वारा प्रमाण को जमा किया है।

इसमें कोई शक नहीं कि यह धारा पेटलैड टर्की रेड डाई वर्क्स कम्पनी लि० (ए०आई०आर०१९६०एस०सी०१००६) के मामले में सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय के प्रभाव को निरस्त करने के लिए बनायी गयी है। इस मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने ठहराया था कि बैलेन्स शीट की प्रमाणिकता के बारे में कोई भी निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता, जब तक यह सकारात्मक सबूत से सिद्ध नहीं किया जा सकता है कि विवरण ठीक हैं, जो विवरण किसी प्रमाणित बही में सम्मिलित है और न्यायालय में दाखिल की जाती है, को एक हलफनामा द्वारा अथवा एक योग्य गवाह की मौखिक प्रमाणिकता द्वारा सिद्ध करना होता है। और जब कोई भी एक कम्पनी अपने लिये बैलेन्स शीट तैयार करती है, तो इसे इस नियम के अपवाद के रूप में नहीं माना जा सकता। विवरण की प्रमाणिकता को सिद्ध करना सम्बन्धित पक्ष की जिम्मेदारी है और अब तक वह इस बोझ व जिम्मेवारी को नहीं निभाता, तब तक यह मानना होगा कि विवरण सिद्ध सहीं नहीं है।

नियोजकों की बैलेन्स शीट और अन्य विवरणों, जिन्हें देश की उच्चतम न्यायिक अधिकारी ने अमान्य किया है, से श्रमिक द्वारा चुनौति देने के महत्वपूर्ण हक के ऊपर लिखे प्राविधान में छीन लिया गया हैं।

यह आम जानकारी का विषय है कि नियोजकों के अधिकारियों द्वारा बेलेन्स शीट को इस प्रकार तैयार किया जाता है और इस तरह तोड़ा मरोड़ा जाता है कि कर और बोनस की जिम्मेवारियों से बचा जा सके। श्रमिक लेखा जोखा की तैयारी में एक पक्ष नहीं है, परन्तु वे उद्योग के लाभ में सहभागीदार हैं। इसलिये उन्हें लेखा जोखा के निरीक्षण का अधिकार होना चाहिये, ताकि वे अपने हिस्से के सही आंकड़ों को बना सके व देख सकें। केवल मात्र विवरण प्रस्तुत करना अथवा खर्चे को भिन्न-भिन्न भागों में बाँटना अथवा श्रमिकों को कुछ स्पष्टीकरण प्रस्तुत करना ही पर्याप्त नहीं है।

इसलिये धारा २३, २४ और २५ में समुचित संशोधन करना चाहिये, जिसके अनुसार नियोजकों को बैलेन्स शीट की प्रमाणिकता को सिद्ध करना पड़े, उस समय जब वह श्रमिकों द्वारा चुनौति दी जाय।

११. धारा ६ में यह प्राविधान है कि कोई भी कर्मचारी बोनस लेने के अयोग्य ठहराया जायगा, यदि वह नौकरी से धोखे अथवा चोरी के दोष में बरखास्त किया गया है। यह स्मरण रहे कि बोनस श्रमिक का कानूनी दावा है, जो श्रमिकों के सहयोग से नियोजक द्वारा कमाये गये लाभ से उत्पन्न होता है। अपने कमाये गये हिस्से को, जिसे बोनस के रूप में अदा किया जाता है, श्रमिक को बंचित नहीं किया जा सकता, क्योंकि उसकी सेबायें ठीक प्रकार से अथवा गलत प्रकार से प्रमुख अथवा गौड़ दुर्व्यवहार के कारण उसकी सेवायें समाप्त की गयी रहती हैं। इस पर उसे दोहरा दंडित किया जा रहा है, प्रथम तो उसे बरखास्त करके और द्वितीय उसके बोनस को रोक करके।

सर्वोच्च न्यायालय ने वार्तालाप की एक श्रृङ्खला में ग्रेच्युती के सम्बन्ध में यह माना है कि ".....ग्रैच्युटी श्रमिक द्वारा एक लम्बी अवधि तक और प्रशंसनीय सेवाओं द्वारा अर्जित की गयी है, उसे इससे बंचित नहीं किया जा सकता, जबकि उसके दुर्व्यवहार की कैसी भी प्रकृति हो, जिसके लिये उसकी सेवायें तक समाप्त की गयी हैं। इन मामलों में गारमेन्ट क्लिनिग वर्क्स और

हिन्दुस्तान टाइम्स लि० के विवाद भी सम्मिलित हैं। यही सिद्धान्त बोनस के मामलें में भी लागू होना चाहिए और उसे बोनस अदायगी के अयोग्य नहीं ठहराया जाना चाहिये, यद्यपि उसे किसी भी कारण से नौकरी से बरखास्त किया गया हो। इसलिये कानून की धारा ६ को अधिनियम से निकाल देना चाहिये।

भविष्य निधि अधिनियम (प्राविडेन्ट फण्ड एक्ट)

इस अधिनियम में हम निम्नलिखित प्राविधानों को परिवर्तन करने का सुझाव प्रस्तुत करते हैं—

१. यह अधिनियम उन सभी संस्थानों पर लागू होता है, जो सूची क्रमांक १ में लिखित किसी भी उद्योग के अन्तर्गत एक कारखाना है और जिसमें २० अथवा इससे अधिक व्यक्ति सेवा में लगे हुए हैं।

अधिनियम का उद्देश्य श्रमिक के अवकाश प्राप्त करने के पश्चात् अथवा उसकी अपमृत्यु के होने पर उसके आश्रितों के लिए उनके भविष्य हेतु नियमित रूप से कुछ बचत करने के भाव को उत्पन्न के लिये है। यह एक सामाजिक कानून है, जो श्रमिकों के लाभ के लिये बनाया गया है। इसलिए कोई भी ऐसा कारण नहीं है कि इस कानून को कारखाने के श्रमिकों तक ही लागू करने तक सीमित रखा जाय और वह भी उन्हीं कारखाने के श्रमिकों को, जो कि सूची क्रमांक १ में लिखे किसी उद्योग में काम करते हों। इस प्रकार के आवश्यक लाभ को सभी श्रमिकों तक बढ़ाना चाहिये।

उद्योग से सम्बन्धित इस निर्धारित धारा के उन व्यापक संस्थानों पर लागू होने में भी पुनः समस्या पैदा होती है, जहाँ पर कई प्रकार की औद्योगिक गतिविधियाँ चलती हैं, जिनमें से कुछ तो इस सूची क्रमांक में आते हैं और कुछ अन्य नहीं आते हैं। वास्तव में सर्वोच्च न्यायालय ने माना है कि इसे निर्धारित करने के लिये कि क्या इस प्रकार के व्यापक कारखानों पर यह कानून लागू होता है अथवा नहीं। इसके लिये आधार ढूँढ़ना यह है कि क्या

कारखाने में होने वाली गतिविधियां, जो सूची क्रमांक के अन्तर्गत हैं, उसका स्वरूप प्राथमिक है और प्रमुख गतिविधि अथवा केवलमात्र आकस्मिक है या इसकी पोषक गतिविधि है। पहले वाले मामले में पूरा कारखाना कानून के दायरे में आता है, परन्तु दूसरे मामले में नहीं आता है। इस प्रकार के निर्धारण के लिए कानूनी कार्यवाही करने और अन्य विवादास्पद घटनाओं को हटाने के लिए यह परामर्श के योग्य है कि बोनस के लाभ को उन सभी संस्थानों के सभी श्रमिकों तक बढा देना चाहिये, जिनमें २० अथवा उससे अधिक लोग काम करते हैं और परिणाम स्वरूप सूची क्रमांक १ को हटा देना चाहिये।

२. सभी प्रकार के संदेहों को दूर करने के लिए यह नियम बनाना चाहिए कि कोई भी एक संस्थान जिस पर एक बार कानून लागू हो जाता है इस कानून के अन्तर्गत वह प्रशासित होता रहेगा, बिना इसको ध्यान दिये कि उसमें काम करने वाले व्यक्तियों की संख्या २० से नीचे है।

३. कानून की धारा १७ (१) के अन्तर्गत यह प्राविधान है कि उपयुक्त सरकार किसी भी संस्थान को प्राविडेन्ट फण्ड योजना से वंचित कर सकती है, यदि उस संस्थान के कर्मचारी प्राविडेन्ट फण्ड पेन्शन्स अथवा ग्रैच्युटी के रूप में लाभान्वित हो रहे हों और सम्बन्धित सरकार इस मत की हो कि इस प्रकार के सामूहिक और पृथक-पृथक लाभ, कानून के अन्तर्गत दिये गये लाभ अथवा किसी दूसरी संस्थान के कर्मचारियों के मुकाबले में किसी भी योजना के अन्तर्गत समान प्रकृति से अनुपात में कम लाभदायक नहीं है।

सर्वोच्च न्यायालय के निर्णयों की एक श्रृङ्खला के अन्तर्गत अब यह अच्छी प्रकार से स्थापित हो चुका है कि श्रमिक ग्रैच्युटी के साथ प्राविडेन्ट फण्ड के दोहरे लाभ के हकदार हैं और सिद्धान्ततः इस दोहरे लाभ के ऊपर कोई रोक नहीं है तथा ग्रैच्युटी के दावे को माना जाना चाहिए, बशर्ते कि नियोजक इस बोझ को सहने की क्षमता रखता है।

प्राविडेन्ट फण्ड अधिनियम १९५२ के लागू होने के पश्चात् यह परिवर्तन महत्वपूर्ण है और प्राविडेन्ट फण्ड एक्ट की धारा १७ (१) के आधीन कुटकारा

प्रदान करने के उद्देश्य पूर्ति हेतु सामूहिक लाभ की मापांकन पद्धति में परिवर्तन करने की आवश्यकता है।

इसलिए हम प्रस्तुत करते हैं कि कानून में इस प्रकार से संशोधन करना चाहिये कि छुटकारा प्रदान करने के लिये सामुहिक लाभ हेतु ग्रैच्युटी को अन्य अवकाश सुविधाओं से सम्बन्धित नही करना चाहिए।

४. वर्तमान काल में कानून के अन्तर्गत धारा १७ के आधीन छुटकारा प्रदान करने की मनाही के लिए कोई प्राविधान नहीं है। इसलिए यह अत्यावश्यक है कि छुटकारा दिये जाने के बाद उसे निरस्त करने के लिए कानून में प्राविधान लाना चाहिए, यदि छुटकारा प्रदान किये गये वातावरण और परिस्थितियों में ठोस परिवर्तन हो गया हो। महाराष्ट्र सरकार ने इस प्रकार के संशोधन के लिए पहले से ही अनुमति मांगी है।

सार्वजनिक क्षेत्र

प्रथम पञ्चवर्षीय योजना के प्रारम्भ में औद्योगिक संस्थानों और सार्वजनिक कारखानों में कुल पूँजी बड़ी मुश्किल से ५० करोड़ रुपये थी। द्वितीय पञ्चवर्षीय योजना के प्रारम्भ में यह पूँजी ११० करोड़ तक हो गयी तथा तृतीय योजना के प्रारम्भ में ६०० करोड़ रुपये रही। तृतीय योजना में केवल सार्वजनिक क्षेत्र में ही १५०० करोड़ रुपये पूँजी से बढ़कर १९६५-६६ वर्ष के अन्त में २४०० करोड़ रुपये हो गयी और चतुर्थ योजना के अन्तर्गत ४००० करोड़ के जुड़ जाने से चतुर्थ योजना के अन्त तक कुल पूँजी ६४०० करोड़ रुपये तक हो जावेगी। उस समय तक यह अनुमान लगाया जाता है कि सार्वजनिक व निजी क्षेत्रों के उद्योगों की सम्पूर्ण पूँजी में करीब-करीब ५६ : ४४ का अनुपात हो जायगी। १९५१ वर्ष के मुकाबले में सार्वजनिक क्षेत्र में लगायी गयी पूँजी १३० गुणा बढ़ जायगी। इसी प्रकार इन वर्षों में सार्वजनिक क्षेत्र में रोजगार पाने वालों की संख्या भी बढ़ गयी है। १९६१ और १९६६ के बीच यह ७० लाख ५० हजार से बढ़कर ९३ लाख ६४ हजार हो गयी है, जो कि ३३ प्रतिशत की बढ़ोतरी है।

इसलिये अब देश में सरकार सबसे बड़ी नियोजक बन गयी है। परिणाम स्वरूप जो कुछ भी नीतियाँ और कार्यक्रम औद्योगिक सम्बन्धों के क्षेत्र में अपनायी जाय, ऐसी आशा की जाती है कि उनका सार्वजनिक क्षेत्र में भी पालन होना स्वाभाविक होना चाहिए। और यह सरकार की नैतिक जिम्मेवारी है कि वह एक आदर्श नियोजक की तरह व्यवहार करे और निजी क्षेत्र के नियोजकों के लिए एक नमूना प्रस्तुत करे। सरकार को नियोजक के रूप में हर समय अग्रगण्य भूमिका निभानी होगी और यह भूमिका सार्वजनिक क्षेत्र के कर्मचारियों के हितों के रक्षक के रूप में होनी चाहिए। उसे किसी भी श्रम कानून से किसी भी प्रकार का छुटकारा नहीं प्राप्त करना चाहिये। सार्वजनिक और निजी क्षेत्र में कोई मतभेद नहीं रहना चाहिये, जहाँ तक कि श्रम कानून और उसे क्रियान्वित करने का प्रश्न है।

प्रथम पञ्चवर्षीय योजना ने इस सिद्धान्त को स्वीकार किया था कि सभी प्रकार के श्रम कानूनों की सुविधाओं को जो निजी क्षेत्र के कारखानों में सेवारत श्रमिकों के लिये लागू थे, सार्वजनिक क्षेत्र में सेवारत श्रमिकों पर लागू होने चाहिए।

द्वितीय पञ्चवर्षीय योजना ने एक कदम आगे बढ़ाया है और निःसन्देह रूप से इस प्रकार से कहा है—

"इस तथ्य को ध्यान में रखकर कि भविष्य में सार्वजनिक क्षेत्र बढ़ेगा, सार्वजनिक कारखानों में औद्योगिक सम्बन्धों को ध्यान में रखकर प्रशासकीय पद्धति कारखानों की सफलता के लिए और श्रमिकों की आकांक्षाओं की पूर्ति के लिए बहुत महत्व की है, इसलिए सार्वजनिक नियोजकों की ओर से नियोजक की जिम्मेवारी से हटने को इस आधार पर निरुत्साहित करना होगा कि वह लाभ हेतु काम नहीं कर रहा है। सर्वसाधारण सार्वजनिक कारखानों के प्रबन्ध को श्रम कानूनों से छुटकारा प्राप्त करने की कोशिश नहीं करनी चाहिये अथवा अन्य छूट, जो कि सार्वजनिक क्षेत्र में उपलब्ध नहीं है, को नहीं मांगना चाहिये। अन्तिम विवेचन के अन्तर्गत उसने बताया है कि सार्वजनिक क्षेत्र के कर्मचारियों को कम से कम निजी क्षेत्र के कर्मचारियों के

समान होना चाहिये। और इसमें मौलिक स्वाभिमान का अनुभव करना चाहिये कि सार्वजनिक क्षेत्र में क्या उत्पादन करते हैं और उनकी क्या स्थिति है ?"

इस दृष्टि कोण को उस समय के केन्द्रीय श्रम मन्त्री श्री गुलजारीलाल नन्दा ने और स्पष्ट कर दिया, जब उन्होंने सार्वजनिक क्षेत्र के कारखानों के प्रमुखों के सम्मेलन में जो जनवरी १९५६ में हुआ था, घोषणा की कि श्रम कानूनों के लागू होने में निजी और सार्वजनिक क्षेत्रों में कोई अन्तर व मतभेद नही होगा।

तृतीय पंच वर्षीय योजना में यह कहा गया था कि "सार्वजनिक क्षेत्र के नियोजकों को उन श्रम नीतियों के अपनाने की विशेष जिम्मेदारी है जो एक तर्क संगत खर्चे पर एक सक्षम कर्मचारी बल को प्राप्त करने और बनाये रखने में सहायक होगा।"

श्रम मन्त्रियों के १६ वें सम्मेलन में यह आग्रह पूर्वक दुहराया गया कि सार्वजनिक क्षेत्र में श्रम कानूनों के लागू करने के लिए वही स्तर होना चाहिए, जो निजी क्षेत्र में है। और सिफारिश की कि सार्वजनिक क्षेत्र न केवल एक प्रबुद्ध नियोजक होना चाहिये वरन् एक प्रगतिशील नियोजक भी होना चाहिए और निजी नियोजकों के लिये नमूना प्रस्तुत करनी चाहिये।

इस घोषित उद्देश्य के बावजूद भी सार्वजनिक क्षेत्र के प्रतिनिधि श्रम कानूनों के पालन के मामले में एक सुविधा प्राप्त स्थिति की मांग करते करते हैं। बोनस आयोग के सम्मुख ऐसे प्रतिनिधियों द्वारा धारण की गयी स्थिति का एक नमूना इस प्रकार की है।

आयोग ने अपनी रिपोर्ट में पृष्ठ ८८ पर निम्नलिखित उद्धरण का उल्लेख किया हैं।

'हमारे सम्मुख सार्वजनिक क्षेत्र के कारखानों के कई प्रतिनिधि उपस्थित हुए और अपना प्रतिनिधित्व प्रस्तुत किया। उन्होंने एक अथवा दूसरे

प्रकार से सार्वजनिक क्षेत्र के कारखानों की विशेष प्रकृति पर आग्रह किया और बताया कि उनका प्राथमिक उद्देश्य देश की आर्थिक बढ़ोत्तरी में सहायक होना है। उन्होंने सर्व साधारण रोजगार को प्रोत्साहन करने और समुदाय के कल्याण करने का दृष्टिकोण प्रस्तुत किया, लाभ की दृष्टि द्वितीय स्थान मानी जाती है तथा अन्ततोगत्वा जो भी लाभ होगा-उसे सम्पूर्ण समाज के हित के लिए अधिक उपयोग किया जायगा, अत्यधिक कारखाने इस मौलिक प्रकृति के लिये बनाये गये हैं कि जिसके परिणाम स्वरूप निजी क्षेत्र में उन उद्योगों को जो सार्वजनिक क्षेत्र के उद्योगो पर निर्भर करते हैं का प्रोत्साहन देगा, कुछ वित्तीय सस्थायें, जो वर्तमान काल में बनायी गयी हैं, इस उद्देश्य के लिय नहीं बनायी गयी हैं कि वे स्थापित निजी वित्तीय संस्थाओ की वाणिज्य गतिविधियों को रोक अथवा अवरोध पैदा करें बल्कि आधारभूत रूप से इसलिए बनायी गयी है कि निजी क्षेत्र मे उद्योगों के विकास के लिए सस्ते दर पर ऋण प्रदान करे, जब ऋण की स्थिति जटिल बनी हुई हो अथवा जहा अधिक खतरा मोल लेने की सम्भावना हो और इस हेतु स्थापित संस्थायें ऋण देने के लिय कुछ मात्रा में हिचकिचा रही हों ....। इसलिए उन्होंने निजी क्षेत्र के उद्योगों के मुकाबले में बोनस के प्रश्न पर भिन्न प्रकार के व्यवहार के लिये तर्क प्रस्तुत किया।"

अनेक मामलों में बेतन ढांचे के निर्धारण में भी सार्वजनिक क्षेत्र यह तर्क प्रस्तुत करना चाहता हैं कि सरकारी कम्पनियों को सार्वजनिक क्षेत्र के कम्पनियों के समरूप नहीं देखा जाना चाहिये. जिसके निम्नलिखित कारण हैं—

(१) केन्द्रीय सरकार के साथ सम्बन्ध

(२) देश के भिन्न भिन्न भागों में भिन्न भिन्न सार्वजनिक उद्योगों में समानता अथवा कम से कम किसी भी प्रकार की असमानता रखने की आवश्यकता।

(३) सार्वजनिक क्षेत्र के उद्योगों में लागू किये जाने वाले क्षमता,

लाभ और अतिरिक्त शब्दों से सम्बन्धित विषयों की व्याख्या जो निजी क्षेत्र के उद्योगों में लागू किये जाने वाले शब्दों के अर्थ से भिन्न है।

(४) सार्वजनिक क्षेत्र के उद्योगों की समूची सुविधायें निजी क्षेत्र में दी जाने वाली सम्पूर्ण सुविधाओं के मुकाबले मे अधिक हे।

(५) सार्वजनिक क्षेत्र के उद्योगों में कर्मचारियों की सुरक्षा निजीक्षेत्र के उद्योगों के मुकाबले में बहुत अधिक है।

फिर भी इसे उल्लेख करना संतोष जनक है कि हिन्दुस्तान एन्टी बायोटिक्स लि० के विरुद्ध उसके श्रमिकों के मुकदमे में सर्वोच्च न्यायालय ने इन तर्कों को अमान्य कर दिया। न्यायालय का यह निर्णय था कि सार्वजनिक क्षेत्र के कारखानों का, जिनका एक स्पष्ट स्वायत्तशासी अस्तित्व है, उन्हों सिद्धान्तों द्वारा नियंत्रित होना चाहिए, जिस प्रकार निजी क्षेत्र के कारखानों के संदर्भ में औद्योगिक अभि निर्णय की व्यवस्था विकसित की गयी है।

जहाँ तक श्रम कानूनों के क्रियान्वयन करने का प्रश्न है, अनुभव बहुत ही निराशा जनक है। इस संदर्भ में क्रियान्वयन और मूल्यांकन विभाग के १९६६ के अध्ययन बहुत ही महत्व पूर्ण हैं। हम सार्वजनिक क्षेत्र के कारखानों में से एक नेशनल इन्स्ट्रूमेन्ट्स लि० के बारे में अध्ययन के निष्कर्ष को नीचे लिख रहे हैं।

"श्रम कानूनों के क्रियान्वयन सम्बन्धी स्थिति नेशनल इन्स्ट्रूमेन्ट्स लि० में बहुत ही असन्तोष जनक है। दुर्घटनाओं की रिपोर्ट्स समय पर नहीं भेजी जाती और कारखाना कानून व श्रमिक कम्पसेसन्स एक्ट के अन्तर्गत वार्षिक रिपोर्ट को भी सम्बन्धित अधिकारियों के पास भेजी नही जाती। कारखाने में सुरक्षा के उपाय उपयुक्त नहीं बनाये गये हैं। डाईकास्टिंग विभाग धुयें से भरा रहता है। शौचालय बहुत गन्दे हैं और कैन्टीन इतनी छोटी है कि सभी श्रमिकों को जो वहाँ भोजन करते हैं, बैठने का स्थान नहीं है। श्रमिकों को लीव बुक्स नहीं दी गयी हैं। कुछ मामलों में श्रमिकों के वेतन की कटौती कानूनी सीमा से अधिक थी और दो मामलों में तो श्रमिक कम्पन्सेशन एक्ट के

अन्तर्गत दिये जाने वाला मुआवजे का आधा ही दिया गया, यद्यपिपहली जनवरी १९६३ से प्राविडेन्ट फण्ड योगदान का दर सवा छ प्रतिशत से ८ प्रतिशत बढ़ा दिया गया था, किन्तु प्रबन्धक ने अभी जनवरी १९६३ से मई १९६५ तक बढे हुए दर के अनुसार अपना योगदान प्रस्तुत नहीं किया है।"

ऐसे ही व्यवहार अन्य कई इकाइयों द्वारा किया गया है. उदाहरणार्थ- कारखाना कानून के उल्लंघन अथवा अमुचित क्रियान्वयन के बहुत से उदाहरण निरीक्षण अधिकारियों द्वारा हिन्दुस्तान मशीन टूल्स पंन्जौर के प्रबन्धकों की जानकारी में लाये गये। इस उल्लंघनों को ठीक करने के लिये प्रबन्धकों को कई बार चेतावनी के पत्र दिये गये। क्रियान्वयन और मूल्यांकन विभाग ने १९६६ में किये गये अध्ययन में लिखा कि प्रबन्धक कारखाना कानून के महत्व पूर्ण प्राविधानों को ठीक प्रकार से क्रियान्वित करने के लिये उचित ध्यान नहीं दे रहे हैं, जैसा कि लिफ्ट के परीक्षण में, कारखाने कार्य स्थल पर की सुरक्षा के सम्बन्ध में, श्रमिकों को संरक्षण उपकरणों को मुहैय्या कराने में, प्राथमिक उपचार हेतु औषधियों के बारे में, देख-रेख के बारे में तथा शौचालय की सफाई आदि के बारे में उन्होंने ध्यान नहीं दिया है।

ऊपर लिखी परिस्थितियों के अन्तर्गत भारतीय मजदूर संघ यह प्रस्तुत करता है कि जहां तक श्रम सम्बन्धी विषयों का प्रश्न है, राष्ट्रीय श्रम आयोग को सार्वजनिक क्षेत्र के कारखानों के किसी भी रूप में अलग से किये जा रहे विशेष व्यवहार की विवादास्पद स्थिति को अन्तिम रूप से समाप्त करनी चाहिये और हम यह विचार रखते हैं कि निजी और सार्वजनिक दोनों ही क्षेत्रों में किसी भी प्रकार पक्षपात नहीं करना चाहिए।